कुस्तुन्तुनिया का पतन

मनोज

यह अनुभव इतिहास शिक्षा के उबाऊपन, बोझिलता और नीरसता का एक बयान है कि कैसे अतीत में घटी-घटनाएं बच्चे के लिए संदर्भहीन और अप्रासांगिक होने लगती हैं। अनुभव के अंत में प्रो. यशपाल समिति की रपट से दिया गया अंश भी इतिहास शिक्षण की इसी हकीकत को सामने रखता है।

'किस देश का नाम कुस्तुन्तुनिया है ?' - बी. बी. सी. हिन्दी सेवा के 'हमसे पूछिए' कार्यक्रम में पत्र लिखकर नालंदा बिहार से मोहम्मद शाहजहां कमर जानना चाहते हैं। यह बात अप्रैल, 2007 की है।

लगभग 27 वर्ष पहले नवीं-दसवीं कक्षा में हमारे इतिहास के शिक्षक ने शायद कुस्तुन्तुनिया के पतन के साथ यूरोप के पुनर्जागरण की चर्चा शुरू की होगी, हममें से किसी ने पूछने की जरूरत भी नहीं समझी कि आखिर कुस्तुन्तुनिया किसी व्यक्ति का नाम है या शहर अथवा देश का, दोपहर की आधी छुट्टी के बाद लगने वाली कक्षा में इस तरह के नामों, शताब्दियों और सालों की चर्चा तो होती ही रहती थी, अखबारी कागज पर छपी इतिहास की रंगहीन पाठ्य सामग्रियां भी क्लास रूम की ऊब और आलस्य से उबरने में बहुत सहायक नहीं थीं, फिर भी पहली बार इतिहास के अध्यापक के मुंह से 'कुस्तुन्तुनिया' शब्द सुनकर कहीं तो कुछ गुदगुदी हुई होगी कि इतने वर्षों बाद भी यह शब्द स्मृति में मौजूद है। कारण शायद इसका ध्वनि-विन्यास हो- उकारांत कोमल अनुनासिक वर्णों की आवृत्ति - 'तुन' ...'तुनिया', इस आकर्षण के बावजूद मोहम्मद कमर की तरह इस शब्द को किसी संदर्भ से जोड़ने की कोई कोशिश अथवा इसे अर्थ देने की कोई चेष्टा मैंने नहीं की।

आठवीं-नवीं कक्षा तक आते-आते ऐतिहासिक विवरणों को किसी संदर्भ से जोड़ने और उसमें किसी प्रकार का अर्थ तलाशने की जद्दोजहद से मैं मुक्त हो चुका था। इससे पूर्व मिडिल स्कूल तक कम से कम भारतीय इतिहास से जुड़े कुछ प्रसंग मेरे लिए रंग, रूप, रस, गंध और स्वाद से भरपूर हुआ करते थे। राणा प्रताप ने घास की जो रोटी खाई होगी उसका स्वाद कैसा रहा होगा ? सुभाष चन्द्र बोस की मिलिट्री पोशाकें कहां सिलती होगीं और उसमें कितने बटन टांकने पड़ते होंगे ?

दरअसल भारत का इतिहास मेरे लिए एक ही मंच पर अभिनीत होने वाली अलग-अलग नाट्य-प्रस्तुतियों की शृंखला की तरह उद्घाटित हुआ करता था। इन भिन्न-भिन्न नाटकों में अभिनेताओं की पोशाकें बदल जाया करती थीं और कभी-कभी मंज सज्जा भी, लेकिन अभिनेता कमोवेश एक ही मंडली के हुआ करते थे। जैसे राणा-प्रताप और कुंवर सिंह, चाणक्य या सरदार पटेल की भूमिका निभाने वाले अभिनेता एक हो सकते थे। कुछ वैसे ही जैसे गांव की रामलीला में रावण की भूमिका निभाने वाला अभिनेता लक्ष्मण-परशुराम संवाद में परशुराम की भूमिका में भी दिख जाया करता था। न तो मिडिल स्कूल में और न ही हाई स्कूल में किसी ने यह बताने की कोशिश की कि राणा प्रताप और कुंवर सिंह के बीच सिर्फ वस्त्र विन्यास और मंच सज्जा ही नहीं बदली है, बल्कि मंच के स्थापत्य में कुछ बुनियादी बदलाव घटित हो चुकें हैं। राणा प्रताप और कुंवर सिंह की काया में 'राष्ट्र-भक्ति' और 'स्वाधीनता' की भावनाएं महज अवतरित नहीं हुई हैं, बल्कि इन भावनाओं को गढ़ने और संवारने में इतिहास की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

लेखक परिचय : दिल्ली विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में एम.ए., एम.फिल., लगभग दस वर्ष तक उच्च शिक्षा में अध्यापन एवं द्वितीय भाषा के तौर पर बेल्जियम में हिन्दी शिक्षण। संप्रति : दिगन्तर में फैलो के तौर पर कार्यरत।

सम्पर्क : दिगन्तर, टोडी रमजानीपुरा, खोनागोरियान रोड, जगतपुरा, जयपुर-302025 राजस्थान

हाई स्कूल के इतिहास के अध्यापक ने कब विश्व इतिहास की ओर रुख किया इसका हमें पता ही नहीं चला होगा। अब तो रोज-रोज मंच भी बदलने लगे और अभिनेता भी अपरिचित से लगने लगे। व्यक्ति, स्थान और घटनाओं का ऐसा बेतरतीब और अंतहीन सिलसिला शुरू हुआ कि दोपहर बाद लगने वाली इतिहास की हर कक्षा के खत्म होने का इंतजार 'वोटिंग फॉर गोदो' की तरह एब्सर्ड होने लगा।

कुस्तुन्तुनिया के पतन से शुरू हुए घटनाक्रम की परिणति यूरोप के पुनर्जागरण में हुई होगी और बावजूद इसके कि आज भी इस्ताम्बुल (कुस्तुन्तुनिया का वर्तमान नाम) विश्व का एक प्रमुख नगर है, मेरे लिए तो कुस्तुन्तुनिया आज भी इतिहास-शिक्षण की एब्सर्डिटि का व्यंजक है। ◆

इतिहास की पाठ्यपुस्तकें

इतिहास की पाठ्यपुस्तकों की लेखन शैली में आए अनेक परिवर्तनों के बावजूद, इतिहास का पाठ्यक्रम बच्चों के लिए असन्तोषप्रद और निरर्थक बना हुआ है। इससे इतिहास शिक्षण का उद्देश्य पूरा नहीं होता क्योंकि बच्चे इतिहास को अपनी विरासत से जोड़ने में असमर्थ रहे हैं। अपेक्षा यह की जाती है कि कक्षा 6 से 8 के दौरान प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के संपूर्ण ज्ञात इतिहास का अपने मस्तिष्क में पूर्ण चित्र बना पाएंगे। चूंकि इन कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों में विस्तृत काल अवधि के इतिहास का वर्णन करना होता है इसलिए इनमें विषयवस्तु की सघनता अधिक होती है। जिसका मतलब है कि ऐतिहासिक काल बहुत संकुचित हो जाता है। उदाहरणतया, कुछ वाक्यों में ही अनेक वर्षों के इतिहास का वर्णन कर दिया जाता है। यह संक्षिप्त शैली बच्चे को, जैसा भी वर्णन किया है उसे वैसा ही स्वीकार करने के लिए बाध्य करती है। पाठ्यपुस्तकों में विस्तार पूर्वक विषय सामग्री को प्रस्तुत नहीं किया जाता ताकि वह बच्चा तर्क अथवा चिन्तन के लिए उसे आधार बना सके बल्कि उससे अपेक्षा की जाती है कि वह तीन वर्षों में भारत के 'सम्पूर्ण' इतिहास को एक बड़े आकार वाली पाठ्यपुस्तक से पढ़ लेगा। इस प्रकार की पाठ्यपुस्तक बच्चे को (और शिक्षक को) अध्ययन करने अथवा कोई दलील तैयार करने में समय नष्ट करने की बजाय यथा सम्भव 'याद करने' के लिए बाध्य करती है।

इतिहास के पाठ्यक्रम की इस सामान्य समस्या के अलावा, हमने यह पाया है कि कुछ राज्यों में इतिहास पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु संक्षिप्त सूचनाओं का संग्रह मात्र है। पश्चिम बंगाल में इतिहास के पाठ्यक्रम में यह प्रवृत्ति अत्यधिक मात्रा में मौजूद है। उदाहरण के लिए, कक्षा 8 में कुल मिलाकर बच्चों को 17 विषय पढ़ने होते हैं जो इस प्रकार हैं :

1. आधुनिक युग, 2. यूरोप में पुनर्जागरण, 3. यूरोपियनों द्वारा विश्व का विस्तार, 4. यूरोप में सुधार आंदोलन, 5. 12वीं शताब्दी में अंग्रेजी क्रांति, 6. भारत, 7. भारत में ब्रिटिश हुकूमत की स्थापना और 1857 तक विकास (संक्षिप्त वणर्नात्मक रूप में), 8. अट्ठारहवीं शताब्दी में विश्व, 9. 1815 से यूरोप, 10. (क) 1911 तक चीन में हुई गतिविधियां, (ख) 1914 तक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में जापान की उन्नति, 11. ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन भारत 1858-1914, 12. प्रथम विश्व युद्ध, 13. बोल्शेविक क्रांति, 14. यूरोप 1919-1939, 15. द्वितीय विश्व युद्ध, 16. भारत 1919-1947, 17. (क) चीन में क्रांति 1911-1949, (ख) इसके बाद दक्षिण पूर्व एशिया में क्रांति, (ग) द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पराधीन देशों में असन्तोष और राष्ट्रवाद का विस्तार।

पाठ्यक्रम में ही दिए गए निर्देशों के अनुसार संपूर्ण पाठ्यक्रम को प्रस्तुत करने के लिए पाठ्यपुस्तकों में पृष्ठ संख्या केवल 135 होगी। इससे स्पष्ट होता है कि पाठ्यक्रम बनाने वाले मानते हैं कि विषय सामग्री को संक्षेप में प्रस्तुत करने से पाठ्यपुस्तक की पठनीयता तथा विषयवस्तु की ग्राह्यता पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

'शिक्षा बिना बोझ के'

(प्रोफेसर यशपाल समिति की रिपोर्ट से अंश)